Nikaṣa, Vol.-1, Issue-4, 2012, Pages 1-6 ISSN: 2277-6826

# संस्कृत काव्यशास्त्र में व्यायोग-स्वरूप

रेखा कुमारी*

rekhakumari2004@gmail.com

***सार***

*रूपक भेदों में व्यायोग एकांकी रूपक भेद है। नाटक-प्रकरण आदि की अपेक्षा नाट्य भेदों में इसे अल्प महत्त्व का माना जाता है किन्तु इसकी अल्पता नाट्य के विकास-क्रम में इसकी प्राचीनता का द्योतक है। साथ ही रंगमंचीयता आदि की दृष्टि से आज भी यह सर्वाधिक सफल है। फलतः प्रायः सभी काव्यलक्षणकारों ने व्यायोग के स्वरूप को प्रतिपादित किया है। प्रस्तुत शोध लेख में विविध-काव्यशास्त्रकारों द्वारा निरूपित व्यायोग स्वरूप को रखते हुये अन्ततः यह दिखलाने का प्रयास किया गया है कि व्यायोग स्वरूप के विषय में आचार्यों के मत में कतिपय विषमता के होते हुये भी प्रायः समानता की स्थिति है।*

संस्कृत काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में व्यायोग नामक रूपक भेद अभिनेयता, प्राचीनता, लोकप्रियता व मनोरंजकता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। काव्यलक्षणकारों ने दृश्यकाव्य के अन्तर्गत इस रूपक भेद के स्वरूप पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। व्यंग्य की प्रधानता-अप्रधानता पर आधारित उत्तमादि अर्थात् ध्वनि, गुणीभूतव्यङ्ग्यादि काव्यभेदों के अतिरिक्त काव्याचार्यों ने दृश्य और श्रव्य भेद से भी काव्य प्रकारों की चर्चा की है। साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ का कथन है कि - 'दृश्यश्रव्यत्वभेदेन पुनः काव्यं द्विधा मतम्[१]' अर्थात् दृश्य और श्रव्य भेद से पुनः काव्य दो प्रकार के कहे गये हैं। उन दृश्य और श्रव्य रूप काव्यभेदों में रङ्गमञ्च पर अभिनेय अर्थात् अभिनय के योग्य काव्य, दृश्य काव्य कहलाता है- 'दृश्यं तत्राभिनेयं'[२], यथा- नाटकादि। यह दृश्य काव्य नाट्य, रूप, रूपकादि विविध अभिधानों से भी अभिहित किया गया है। नाट्य विषयक नाट्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य भरत का विचार है कि नाट्य में तीनों लोकों के भावों का अनुकीर्तन होता है- "त्रैलोक्यस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्।"[३] नाट्यशास्त्रकार की दृष्टि में उनके द्वारा निर्मित यह नाट्य नाना प्रकार के भावों से सम्पन्न है, नाना प्रकार की अवस्थाओं को निर्देशित करने वाला है और लोकवृत्त का अनुकरण करने वाला है-

"नानाभावोपसम्पन्नं नानावस्थान्तरात्मकम्।
लोकवृत्तानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम्।।[४]"

---

* शोध-छात्रा, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-११०००७

१ साहित्यदर्पण, ६.१

२ वही, ६.१

३ नाट्यशास्त्र, १.१०८

४ वही, १.११३

नाट्यशास्त्रकार आचार्य भरत के मत के अनुरूप नाट्य के विषय में दशरूपककार आचार्य धनञ्जय का कहना है कि यह अवस्था का अनुकरण है- 'अवस्थानुकृतिर्नाट्यं।[१]' दशरूपकार के कथन की विवेचना करते हुये अवलोककार धनिक कहते हैं कि काव्य में उपनिबद्ध या वर्णित नायक के धीरोदात्तादि अवस्थाओं का अनुकरण नाट्य है। यहाँ धीरोदात्तादि अवस्थाओं के द्वारा अनुकर्त्ता (अनुकरण करने वाला) अर्थात् नट अनुकार्य अर्थात् जिस पात्र का अनुकरण किया जाता है उसके साथ आङ्गिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक आदि अभिनयों द्वारा तादात्म्य (एकरूपता) स्थापित कर लेता है-

"काव्योपनिबद्धधीरोदात्ताद्यावस्थानुकारश्चतुर्विधाभिनयेन तादात्म्यापत्तिर्नाट्यम्।[२]"

पूर्ववर्ती नाट्याचार्यों के समान साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ का भी विचार है कि दृश्य काव्य अभिनेय होता है अर्थात् दृश्य काव्य में नट आङ्गिक, वाचिकादि के द्वारा राम, युधिष्ठिरादि पात्रों की अवस्था का अनुकरण करता है-

"भवेदभिनेयोऽवस्थानुकारः स चतुर्विधः।
आङ्गिको वाचिकश्चैवमाहार्यः सात्त्विकस्तथा।।[३]"

पुनः आचार्य कहते हैं- "नटैरङ्गादिभिः रामयुधिष्ठिरादीनामवस्थानुकरणमभिनयः।[४]" आचार्यों के अनुसार दृश्य अर्थात् चाक्षुष् ज्ञान का विषय होने के कारण नाट्य को रूप भी कहा जाता है- 'रूपं दृश्यतयोच्यते[५]' साथ ही नटादि में रामादि पात्रों की अवस्था अर्थात् रूप का आरोप होने से नाट्य रूपक भी कहलाता है- 'रूपकं तत्समारोपात्[६]' तथा 'तद्रूपारोपात्तु रूपकम्[७]'। आचार्यों ने सामान्यतः इस नाट्य या रूप या रूपक के दस भेद बतलाये हैं-

"नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोगसमवकारडिमाः।
ईहामृगाङ्कवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश।।[८]"

रूपक के इन दस भेदों में नाटक की प्रधानता एवं सर्वाङ्गपूर्णता के कारण आचार्यों ने उसे प्रथम स्थान प्रदान किया है। प्रकरण भी सर्वलक्षणसम्पन्न रूपक- प्रकार है। दूसरी ओर भाण, व्यायोग, प्रहसनादि रूपक प्रकार एकाङ्की होने के कारण यद्यपि नाटक और प्रकरण की अपेक्षा न्यून महत्त्व के हैं, किन्तु इन रूपक प्रकारों की यह न्यूनता नाटक और प्रकरण की अपेक्षा उसकी प्राचीनता को ही अभिव्यक्त करता है। विकास-क्रम में एकांकी रचना का स्थान पहले रहा होगा और उसकी सफलता को आधार बनाकर नाटक और प्रकरण जैसे

---

[१] दशरूपक, १.७

[२] दशरूपक, अवलोक टीका, पृष्ठ संख्या ६

[३] साहित्यदर्पण, ६.२

[४] वही, वृत्ति भाग, पृष्ठ संख्या -४१२

[५] दशरूपक, १.८

[६] वही, १.८

[७] साहित्यदर्पण ६.१

[८] वही, ६.३

सर्वाङ्गसम्पन्न नाट्यविधा विकसित हुए होंगे। नाटक, प्रकरण जैसे उच्च रूपक प्रकारों का विकास हो जाने के बाद भी भाण, व्यायोग, प्रहसन जैसी प्राचीनतम नाट्यविधाएँ समाज में जनसाधारण द्वारा सदैव समादृत एवं मनोरंजनप्रद रही हैं। समाज के विद्वत्वर्ग एवं उच्च वर्ग के रसिकों को भी ये विधाएँ अपने रसोद्रेक से रसान्वित करती रही हैं। यही कारण है कि आज भी इन विधाओं के आधार पर नाट्य-सृजन एवं उसका मंचन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो रहा है, जो लोकप्रियता में किसी तरह न्यून नहीं है। व्यायोग शब्द 'वि' और 'आ' उपसर्गपूर्वक 'युज्' धातु से 'घञ्' प्रत्यय लगकर निष्पन्न होता है। व्यायोग का व्युत्पत्तिपरक अर्थ करते हुए नाट्यदर्पणकार रामचन्द्र गुणचन्द्र कहते हैं- 'विशेषेण आ समन्तात् युज्यन्ते कार्यार्थं संरभन्तेऽत्रेति व्यायोगः[१]' अर्थात् जिस रूपक प्रकार में नायक विशेष रूप से सब ओर से युक्त होता है अर्थात् कार्य के लिए प्रयत्न करता है, उसे व्यायोग कहते हैं।

अभिनवभारतीकार आचार्य अभिनवगुप्त कहते हैं- 'ननु कस्मादयं व्यायोग इत्याह- युद्धं नियुद्धेति व्यायामे युद्धप्राये नियुध्यन्ते पुरुषा यत्रेति व्यायोगः इत्यर्थः। नियुद्धं बाहुयुद्धं संघर्षः शौर्यविद्याकुलरूपादिकृता स्पर्धा।[२]' अर्थात् इसे व्यायोग क्यों कहते हैं- क्योंकि इसमें युद्ध, नियुद्ध और युद्धप्राय का वर्णन होता है, यहाँ पुरुष नियुद्ध (बाहुयुद्ध) करते हैं- इसलिए इसे व्यायोग कहते हैं। नियुद्ध का अर्थ यहाँ बाहुयुद्ध होता है और संघर्ष का अर्थ शौर्य, विद्या, कुल तथा रूप आदि से होने वाली स्पर्द्धा है। अवलोककार व्यायोग शब्द की व्युत्पत्ति बतलाते हुए कहते हैं कि जिसमें बहुत से पुरुष पात्र प्रयुक्त किये जाते हैं, वह व्यायोग कहलाता है- 'व्यायुज्यन्तेऽस्मिन्बहवः पुरुषा इति व्यायोगः।[३]'

व्यायोग का स्वरूप स्पष्ट करते हुए आचार्य भरत कहते हैं कि इसका नायक और इतिवृत्त प्रख्यात होता है। यहाँ स्त्री पात्रों की संख्या अल्प होती है। इसमें एक दिन में घटने वाली घटनाओं का विवेचन होता है। यहाँ बहुत से पुरुषपात्र नायक होते हैं। यहाँ दिव्य नायक नहीं होता, बल्कि यहाँ राजर्षि नायक होता है। इसमें एक अङ्क होता है तथा यहाँ युद्ध, नियुद्ध, आधर्षण और संघर्ष का वर्णन होता है। दीप्त काव्य तथा दीप्त रसों से यह युक्त होता है।[४]

नायक के विषय में अभिनवभारतीकार ने आचार्य भरत से भिन्न दीप्त रसवाले अमात्य, सेनापति जैसे प्रख्यात व्यक्ति की नायकता को स्वीकार किया है। उनका विचार है कि समवकार की तरह यहाँ बारह नायक सम्भव हैं।

---

[१] नाट्यदर्पण, पृष्ठ संख्या- २२१

[२] नाट्यशास्त्र : अभिनवभारती, पृष्ठ संख्या- ६९९

[३] दशरूपक : अवलोक टीका, पृष्ठ संख्या- २४९

[४] व्यायोगस्तु विधिज्ञैः कार्यः प्रख्यातनायकशरीरः।
अल्पस्त्रीजनयुक्तस्त्वेकाहकृतस्तथा चैव।।
बहवश्च तत्र पुरुषा व्यायच्छन्ते यथा समवकारे।
न च दिव्यनायकयुक्तः कार्यस्त्वमेवाङ्क एवायम्।।
न च दिव्यनायककृतः कार्यो राजर्षिनायकनिबद्धः।
युद्धनियुद्धाधर्षणसंघर्षकृतश्च कर्तव्यः।।
एवंविधस्तु कार्यो व्यायोगे दीप्तकाव्यरसयोनिः। - नाट्यशास्त्र, १८.९०-९३

भरत के दी काव्य और दी रसों का अभिप्राय स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा है कि ऐसा काव्य जो ओजगुण से युक्त हो तथा वीर, रौद्रादि रसों से मण्डित हो।[१]

दशरूपककार आचार्य धनञ्जय के अनुसार व्यायोग की कथावस्तु प्रसिद्ध होती है। इसमें प्रख्यात एवं उद्धत नायक का आश्रय लिया जाता है। यह गर्भ एवं विमर्श सन्धियों से रहित होता है। इसमें डिम के समान छह दी रस अर्थात् वीर, रौद्र, बीभत्स, अद्भुत, करुण और भयानक रस हुआ करते हैं। यहाँ कैशिकी को छोड़कर भारती, सात्त्वती, आरभटी आदि वृत्तियाँ होती हैं। इसमें ऐसे युद्ध का वर्णन होता है जो स्त्री के निमित्त नहीं किया जाता है। यहाँ एक दिन के चरित को दिखलाने वाला एक अङ्क होता है। पुरुष पात्रों की संख्या अधिक पायी जाती है।[२]

भावप्रकाशनकार शारदातनय का कहना है कि व्यायोग की कथावस्तु इतिहासप्रसिद्ध होती है। इसका नायक प्रख्यात धीरोदात्त होता है। वह देवता या राजर्षि होता है। व्यायोग में तीन, चार, पाँच नायक होते हैं, किन्तु नायक की संख्या दस से अधिक नहीं होने का यहाँ निर्देश किया गया है। व्यायोग की कथा देवताविषयक होती है। यहाँ स्त्रीपात्रों की संख्या कम होती है। गर्भ तथा अवमर्श सन्धियों के अतिरिक्त यहाँ तीन सन्धियाँ पायी जाती हैं। यह विषकम्भकादि से युक्त होता है। इसकी कथा एक ही दिन की होती है तथा इसमें एक ही अंक होता है। यहाँ भारती व आरभटी वृत्तियाँ पायी जाती हैं। युद्ध, आधर्षण, क्रोध तथा पलायन आदि यहाँ वर्णित होते हैं। इसमें कहीं-कहीं अल्प शृङ्गार-रस पाया जाता है, अन्यथा हास्य और शृङ्गार रस को छोड़कर अन्य छह रस यहाँ देखे जाते हैं। यहाँ वर्णित युद्ध अस्त्रीनिमित्त अर्थात् स्त्री-प्राप्ति के कारण नहीं होता है।[३]

नाट्यदर्पणकार रामचन्द्र-गुणचन्द्र का कहना है कि व्यायोग एक दिन के वृत्तान्त को प्रदर्शित करने वाला तथा एक अङ्क से युक्त होता है। यह गर्भ तथा विमर्श सन्धियों से रहित होता है। इसमें स्त्री के निमित्त संग्राम वर्णित नहीं होता है। यह नियुद्ध अर्थात् बाहुयुद्ध तथा स्पर्धा अर्थात् शौर्य, विद्या, कुल, धन और रूपादि के कारण होनेवाला संहर्ष से उद्धृत अर्थात् दी होता है। इसमें स्त्री पात्रों की अल्पता होती है। इसकी कथावस्तु प्रख्यात होती है। यह वीर, रौद्रादि दी रसों से सम्पन्न होता है तथा दिव्य अर्थात् देवतारूप व राजारूप नायकों से भिन्न

---

[१] नाट्यशास्त्रः अभिनवभारती, पृष्ठ संख्या-६९८-६९९

[२] ख्यातेतिवृत्तो व्यायोगः ख्यातोद्धतनराश्रयः॥
हीनो गर्भविमर्शाभ्यां दीप्तास्युर्डिमवद्रसाः।
अस्त्रीनिमित्तसंग्रामो जामदग्न्यजये यथा॥
एकाहाचरितैकाङ्को व्यायोगो बहुभिर्नरैः। - दशरूपक, ३.६०-६२

[३] व्यायोगस्येतिवृत्तं यत्तत्प्रख्यातमितीरितम्।
धीरोदात्तश्च विख्याता देवा राजर्षयोऽथवा।।
नायकस्त्रिचतुष्पञ्च भवेयुर्न दशाधिकाः।
दिव्ययोनिकथाल्पस्त्रीपरिवारस्त्रिसन्धिकः।।
गर्भाविमर्शरहितो विष्कम्भादिसमन्वितः।
युद्धाधर्षणसम्फेटविद्रवादिनिरन्तरः।।
क्वचित्कः स्वल्पशृङ्गारः षड्दीप्तरसनिर्भरः।
अस्त्रीनिमित्तसङ्ग्रामो व्यायोगः कथितो बुधैः॥ - भावप्रकाशन, अष्टमोऽधिकार, पृ० ३६५

सेनापति, अमात्यादि नायकों से युक्त होता है। व्यायोग में नायिका नहीं होती है। 'नायिका विना' इस पद से नायिका और उसके योग्य दूती आदि परिजनों का निषेध किया गया है। यहाँ नायक के सेवकादि के रूप में चेटी आदि का निषेध नहीं किया गया है।[१]

साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ का कहना है कि व्यायोग का इतिवृत्त या कथानक प्रख्यात होता है। स्त्रीजनों की संख्या कम होती है। यह गर्भ और विमर्श सन्धियों से रहित होता है। इसमें पुरुषपात्रों की संख्या अधिक होती है। यह एक अङ्क वाला होता है। इसमें स्त्री को निमित्त बनाकर युद्ध का वर्णन नहीं होता है। यह कैशिकी वृत्ति से रहित भारती आदि अन्य वृत्तियों वाला होता है अर्थात् कैशिकी को छोड़कर भारती आदि किसी भी वृत्ति में इसकी रचना की जाती है। इसका नायक प्रख्यात होता है। नायक राजर्षि, दिव्य अथवा धीरोद्धत प्रकृतिवाला होता है। हास्य, शृङ्गार और शान्त रस के अतिरिक्त अन्य कोई भी रस इसका अङ्गी अर्थात् प्रधान रस होता है।[२]

## निष्कर्ष

व्यायोगस्वरूप के अन्तर्गत कथावस्तु, अंक, स्त्री-पुरुष पात्रों की संख्या, रसादि की विद्यमानता विषयक काव्यशास्त्रकारों के कथन में प्रायः समानता दिखाई पड़ती है। नायक के प्रख्यात होने की चर्चा भी सभी आचार्य करते हैं किन्तु नायक के स्वरूप व प्रकृति के विषय में आचार्यों में मतभेद दिखाई पड़ता है। नायक की प्रकृति के विषय में भावप्रकाशनकार ने जहां व्यायोग के नायक को उदात्त प्रकृति का बताया है वहीं अन्य आचार्य उसे उद्धत प्रकृति वाला मानते हैं। इसी तरह दिव्य अथवा अदिव्य स्वरूप वाले नायक की विद्यमानता के विषय में भी मतभेद दिखाई पड़ता है। फिर भी, अन्ततः यह कहा जा सकता है कि काव्याचार्यों ने कुछ अन्तर के साथ व्यायोग के स्वरूप के विषय में प्रायः एक समान दृष्टि रखी है।

## सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

१. द्विवेदी, पारसनाथ (संपा. एवं व्या.), १९८२-२००४, ***नाट्यशास्त्र (अभिनवभारती टीका सहित),*** सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।।

२. शास्त्री, श्रीनिवास ((संपा.), १९६९, ***दशरूपक (अवलोकव्याख्या सहित),*** साहित्य भण्डार , मेरठ।

---

[१] एकाहचरितैकांको गर्भामर्शविवर्जितः।
अस्त्रीनिमित्तसंग्रामो नियुद्धस्पर्धनोद्धतः।।
स्वल्पयोषिज्जनः ख्यातवस्तुर्दीप्तरसाश्रयः।
अदिव्यभूपतिस्वामी व्यायोगो नायिकां विना।। - नाट्यदर्पण, द्वितीयविवेक, कारिका ७४-७५

[२] ख्यातेतिवृत्तो व्यायोगः स्वल्पस्त्रीजनसंयुतः।।
हीनो गर्भविमर्शाभ्यां नरैर्बहुभिराश्रिता॥
एकाङ्कश्च भवेदस्त्रीनिमित्तसमरोदयः।
कैशिकीवृत्तिरहितः प्रख्यातस्तत्र नायकः।।
राजर्षिरथ दिव्यो वा भवेद्धीरोद्धतश्च सः।
हास्यशृङ्गारशान्तेभ्य इतरेऽत्राङ्गिनो रसाः।। - साहित्यदर्पण, ६.२३१-२३३

३. अग्रवाल, मदन मोहन झा (अनु.), १९८३, ***भावप्रकाशन,*** चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

४. नगेन्द्र (सम्पा.), १९९०, ***नाट्यदर्पण***, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

५. विद्यालंकार, निरूपण (सम्पा.), १९७४, ***साहित्यदर्पण,*** साहित्य भण्डार , मेरठ।